ISSN 2230-7850 Impact Factor : 4.1625 (UIF) Volume - 6 | Issue - 5 | June - 2016
Indian Streams Research Journal

भारतीय शास्त्रीय संगीत के शैक्षणिक परम्परा

प्रो. मृत्युंजय अगड़ी
अध्यक्ष, स्नातकोत्तर संगीता विभाग, कर्नाटक विश्वविद्यालय धारवाड.

प्रस्तावना :

भारतीय शास्त्रीय संगीत के शिक्षण की परम्परा अपूर्व काल से चली आ रही है। पुरातन काल में इसका प्रशिक्षण संगीतशालाओं, आश्रमों एवं विद्यामंदिरों में दिया जाता था तथा यहीं से इसकी नींव पड़ी थी। यद्यपि मध्यकाल में शालेय शिक्षण की परंपरा का लोप हो चुका था परन्तु फिर भी आधुनिक काल में विद्यालयीन शिक्षण-व्यवस्था के प्रारंभ होते ही संगीत शिक्षण ने भी विद्यालयों में अपना स्थान बना लिया। संगीत का संस्थागत शिक्षण यहीं से प्रारम्भ हुआ। इस संस्थागत शिक्षण प्रणाली के उद्गम एवं विकास का इतिहास इस पुस्तक के आरम्भ में ही प्रस्तुत किया गया है। इन विश्वविद्यालयों एवं संगीत संस्थानों ने न केवल संगीत शिक्षा का दायित्व निभाया बल्कि संगीत के प्रचार-प्रसार को भी अपना लक्ष्य बनाया। हम कह सकते हैं कि इन्होंने अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाए। इन संस्थानों ने विद्यार्थियों के प्रवेश एवं परीक्षा प्रणाली की योजनाएँ तैयार कर उन्हें प्रोत्साहित करने हेतु छात्रवृत्तियों की नियोजना भी की। प्रशासन की ओर से संगीत के क्षेत्र में, 'पद्मश्री', 'पद्मभूषण', 'पद्मविभूषण' और 'भारत रत्न' जैसी उच्च उपाधियाँ प्रदान करना विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

संगीत शिक्षण संस्थानों की सामूहिक सेवा से संगीत जगत को अनेक लाभ हुए हैं तथा इसका प्रचार भी बहुत अधिक हुआ है परंतु गुणवत्ता और परिपक्वता की दृष्टि से इसके स्तर में गिरावट आ रही है, जिसके लिए संगीत विद्यार्थी, शिक्षक और आलोचक सभी उत्तरदायी हैं। इन संस्थानों में शास्त्रीय संगीत की गुणवत्ता को सुदृढ़ करने के प्रयास किये जाने चाहिएँ। आजकल प्राचीन रागों के स्वरूप में परिवर्तन आ रहे हैं। उन रागों को भविष्य में सुरक्षित रखने के प्रयास किये जाने चाहिएँ। उदाहरणार्थ राग जोग प्रारम्भ में दो निषाद और दो गंधार से गाया जाता था, अब प्रायः कोमल निषाद से ही गाया जाता है।

इसी प्रकार शुद्ध सारंग में कोमल निषाद छोड़ दिया जाता है। रामेश्री में भी कोमल निषाद का प्रयोग आज कम ही होता है। ललित में शुद्ध पेवत के स्थान पर आज कोमल धैवत प्रचलित है। इसी प्रकार आजकल लय को अत्यधिक विलम्बित कर दिया गया है। 50 वर्ष पूर्व एक ताल की बंदिश विलखित लय में 12 या 24 मात्रा में गाई जाती थी, परंतु अब विलम्बित ख्याल की बंदिश एक ताल में 48 मात्रा में गाई जाती है तथा द्रुत बंदिश अतिद्रुत लय में गाई जाने लगी है। फलस्वरूप कई तालों जैसे- झपताल, झूमरा, रूपक, तिलवाड़ा, आड़ाचौताल एवं तीन ताल में मध्य लय का प्रयोग कम हो गया है। कुछ गिने-चुने विद्वान आज भी इन तालों में गाने का प्रयास करते हैं परन्तु शिक्षण संस्थानों में विलम्बित ख्याल एक ताल में सीमित होकर रह गया है। विलम्बित की बंदिशें जो तीन-चार आवर्तन की स्थाई की होती थीं, उन्हें तोड़-मरोड़कर एक आवर्तन में गाने की प्रथा चल पड़ी है, जिससे परम्परागत बंदिशों तथा तालों का लोप होने की संभावना बढ़ने लगी है। कई कलाकार परम्परागत बंदिशों में इच्छानुसार कुछ शब्दों को परिवर्तित कर उसे स्वरचित बंदिश के नाम से प्रस्तुत कर शिक्षण संस्थाओं में भी इनका प्रचार व प्रसार कर रहे हैं. जो परम्परागत बंदिशों के लिए हानिकारक है। शिक्षण संस्थानों को शास्त्रीय संगीत के महत्त्व को समझते हुए शिक्षणविधियों में सुधार, योग्य शिक्षकों की नियुक्ति तथा प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को प्रवेश दिए जाने पर ध्यान देना चाहिए।

प्राचीन काल में हमने देखा कि गुरु-शिष्य परंपरा ही संगीत शिक्षा का आधार थी। आज भी कुछ संस्थान हैं जैसे 'संगीत रिसर्च अकादमी', 'नेशनल सेन्टर फॉर दी परफॉर्मिंग आर्ट्स' आदि, जो उसी प्रकार का वातावरण बनाने में प्रयासरत हैं। यहाँ विद्यार्थी, गुरु के सान्निध्य में रहता है तथा उसकी देखरेख में संगीत शिक्षा ग्रहण करता है। शिक्षा की भिन्न-भिन्न शाखाएँ मनुष्य का तीन प्रकार से विकास करती हैं-शारीरिक, बौद्धिक और आत्मिक। आत्मिक विकास से संबंधित विषयों में गुरु एवं शिष्य के बीच व्यक्तिगत संबंधों का बहुत अधिक महत्त्व है तथा संगीत को वैदिक काल से ही आत्मिक विकास के साधन के रूप में स्वीकार किया गया है। इसका स्वरूप पूर्णतः क्रियात्मक होने के कारण सामूहिक शिक्षा की अपेक्षा व्यक्तिगत शिक्षा के माध्यम से ही श्रेष्ठतम परिणाम प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इस प्रकार प्राचीन गुरु-शिष्य प्रणाली पर आधारित शिक्षा से मंच-प्रदर्शन में समर्थ कलाकारों का निर्माण हो पा रहा है। समय की माँग को देखते हुए आज आवश्यकता है कि गुरु-शिष्य परंपरा के उच्च आदर्शों को संगीत संस्थानों में स्थापित करने के लिए घरानेदार शिक्षकों द्वारा शिक्षण की व्यवस्था की जाए और पुनः इस सांस्कृतिक धरोहर की गरिमा को अक्षुण्ण रखने के प्रयास किए जाएँ जिससे शास्त्रीय संगीत का भविष्य उज्ज्वल हो सके।

विद्यालयीय स्तर से ही यह देखने में आता है कि लड़कों के लिए संगीत शिक्षा का प्रावधान नहीं किया जाता और महाविद्यालयों में भी पुरुषों के लिए विपरीत स्थिति देखी गई है जिसके कारण कई प्रतिभाशाली युवक संगीत शिक्षा से वचित रह जाते हैं इसलिए महाविद्यालयों में पुरुषों के लिए भी संगीत शिक्षण का प्रावधान होना चाहिए। प्राथमिक स्तर पर संगीत को अनिवार्य विषय बनाया जाना चाहिए। ऐसे प्रशिक्षण केन्द्रों की व्यवस्था होनी चाहिए जहाँ शिक्षकों को पूर्णतया विद्यालयीय शिक्षण के लिए तैयार किया जाए। संगीत के विद्यार्थियों के लिए संस्कृत भाषा के ज्ञान को अनिवार्य करना चाहिए, क्योंकि संगीत के अधिकतर प्राचीन ग्रंथ संस्कृत में ही प्राप्त होते हैं। संक्षेप में संस्थानों में शिक्षण व्यवस्था का आयोजन इन सभी बातों पर ध्यान केन्द्रित करके किया जाना चाहिए कि परम्परागत

बंदिशों की रक्षा, तालों का व्यवहार, रागों के स्वरूप की अक्षुण्णता, समयानुसार प्रस्तुतीकरण का संकोच, शिक्षा प्रणाली में सुधार तथा यांत्रिक उपकरणों का यथासंभव उपयोग, ये तथ्य हमारे शास्त्रीय संगीत के स्वरूप को सुरक्षित रखने के लिए अनिवार्य हैं। हज़ारों वर्ष के परिश्रम के पश्चात प्राप्त यह परम्परागत संगीत ही हमारी धरोहर है, जिसे हमें आने वाली पीढ़ियों के लिए सही रूप में सुरक्षित रखना है।

स्पिक मैके, आई.टी.सी., संकल्प एवं अन्य निजी संस्थानों को संगीत सभाओं के आयोजनों में केवल उच्चकोटि के कलाकारों को ही आमंत्रित कर अपने बजट की खानापूर्ति नहीं करनी चाहिए अपितु प्रतिभाशाली युवक-युवतियों को प्रोत्साहन हेतु अवसर प्रदान करना चाहिए। इन संस्थानों को निष्पक्ष रहकर ऐसी कार्यशालाओं तथा शिविरों का आयोजन करना चाहिए जो कि छोटे-छोटे ग्रामों में शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रमों का आयोजन कर उनको संगीत सीखने की ओर प्रेरित करें। आज का युग तकनीकी विकास का युग है जिसने मनुष्य के विकास को सकारात्मक रूप से सभी क्षेत्रों में प्रभावित किया। इस तकनीकी विकास के युग में विभिन्न मुद्रित माध्यमों और इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों, ने एक साथ मिलकर ऐसे सूचना महामार्ग (Information Super Highway) का निर्माण किया है. जिससे समूचा विश्व सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक धरातल पर इस प्रकार सिमट गया है कि आज पूरी दुनिया ने एक 'विश्वगाँव' (Global Village) का रूप ले लिया है। इस प्रक्रम की तीव्रगामी प्रगति में मीडिया ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्राचीन काल में जनसंचार का माध्यम संगीत और नृत्य हुआ करते थे क्योंकि तब जनसंख्या बहुत कम होती थी परंतु आज विशाल जनसंख्या वाले बड़े-बड़े नगरों में संगीत के प्रचार एवं प्रसार के लिए ऐसे माध्यम की आवश्यकता अनुभव की गई जिससे घर बैठे ही समस्त विषयों से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त की जा सके। जिसका श्रेय मुद्रण कला के आविष्कार को तथा इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों को जाता है। इन माध्यमों के अंतर्गत, ग्रामोफोन, आकाशवाणी, सिनेमा, दूरदर्शन, ध्वनिक्षेपक, ध्वनिमुद्रक, संगणक (कम्प्यूटर) आदि साधनों के माध्यम से शास्त्रीय संगीत के क्रियात्मक पक्ष को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। आकाशवाणी, ग्रामोफोन रिकॉर्ड्स आदि ने श्रव्य माध्यम के रूप में संगीत का प्रचार किया तो दूरदर्शन, सिनेमा, कम्प्यूटर आदि के माध्यम से दृश्य-श्रव्य दोनों प्रकार से शास्त्रीय संगीत के प्रचार में सहायता मिली। इन माध्यमों के द्वारा कलाकारों और उनसे जुड़े वाद्यों को लोकप्रियता मिली तथा व्यावहारिक या क्रियात्मक पक्ष को स्थायित्व मिला और कलाकारों एवं शास्त्रीय संगीत के सम्मान तथा प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। इसके साथ ही मुद्रण कला का आविष्कार संचार क्षेत्र में एक बड़ी क्रांति थी। मुद्रण की क्रांति आगे चलकर विचारों की क्रांति सिद्ध हुई। इसके साथ ही इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों के आविष्कार ने मनुष्य की क्षमताओं को विस्तृत करके उसे आश्वस्त किया। शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रमों तथा समय-समय पर शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में पूर्ण किए गए प्रगतिपरक कार्यों की सूचना जनता तक पहुँचाने का कार्य मीडिया द्वारा ही संभव हो सका है।

ध्वनिक्षेपक के आविष्कार से कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया गया, गायन अथवा वादन, हजारों श्रोताओं के बीच पहुँचना संभव हो सका तथा विभिन्न वाद्यों सितार, सारंगी, सरोद, सुरबहार, इत्यादि की विशिष्ट क्रियाएँ मुर्की, कृन्तन, गमकादि स्पष्ट सुनाई पड़ने लगीं जिससे वाद्यों को लोकप्रियता मिलीकाय दोनों में विका में तथा कलाकार कला के प्रति सचेत हुआ क्योंकि थोड़ा सा भी बेसुरापन ध्वनिविस्तारक की सहायता से स्पष्ट सुनाई दे जाता है अर्थात उसकी

थोड़ी सी त्रुटि भी विस्तारक यंत्रों से बड़ी होकर सुनाई पड़ती है। मंच प्रदर्शन के समय खराब ध्वनि तंत्र (साउण्ड सिस्टम) के कारण कलाकार के कार्यक्रम पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। कलाकार कितना ही अच्छा गायक या वादक क्यों न हो माइक्रोफोन की खराबी से गायन या वादन सही रूप में श्रोताओं तक नहीं पहुँच पाता। इस प्रकार कलाकार वर्ग इन उपकरणों के बिना अधूरा हो गया है। जिसका समाधान प्रशिक्षित तकनीकी कर्मचारियों को नियुक्त करके निकाला जा सकता है।

विद्युतीय वाद्य तबला, तानपुरा इत्यादि संगीत शिक्षार्थियों के अभ्यास आदि में सहयोगी सिद्ध हुए। इन विभिन्न माध्यमों के शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभावों को अनुभव किया जा सकता है। टेपरिकॉर्डर में रिकॉर्ड करने का या अन्य कलाकारों का ध्वन्यांकन सुनकर गायकी बनाने का चलन विद्यार्थियों में उत्पन्न होने लगा है, जिससे गुरु के प्रति निष्ठा में कमी आने लगी है। नवोदित कलाकार संगीत की शिक्षा के आरंभ से ही आकाशवाणी, दूरदर्शन पर कार्यक्रम देने के लिए उत्सुक रहते हैं और एक बार मंच प्रदर्शन मिल जाए और मीडिया से प्रभावित हो जाएँ तो पूरी शिक्षा लिए बिना ही इधर-उधर भटक जाते हैं।

रिकॉर्डर, छपाई और स्वरलिपि पद्धति की सुविधा से विद्यार्थियों को उस्तादों की ऐसी सैकड़ों दुर्लभ बंदिशें, जो योग्य शिष्यों को न मिलने के कारण गुरु के साथ ही समाप्त हो जाती थीं, सहजता से उपलब्ध होने लगीं परंतु इससे विद्यार्थियों में मौखिक रूप से याद करने की परंपरा समाप्त हो गई। इन सकारात्मक और नकारात्मक पक्षों को देखने के बाद यह कहा जा सकता है कि जैसे हर सिक्के के दो पहलू होते हैं, वैसे ही कुछ लाभ तो कुछ हानि प्रत्येक आविष्कार के साथ जुड़े ही होते हैं। इस विचार को दृष्टि में रखते हुए देखा जाए तो विभिन्न माध्यमों ने शास्त्रीय संगीत की दिशा में अपना जो प्रभाव डाला है, उससे गुणात्मक उपलब्धियाँ भी प्राप्त हुई हैं। आज सरकार, विभिन्न संस्थानों एवं मीडिया के विभिन्न प्रकारों की सहायता से शास्त्रीय संगीत, विदेशों में भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना चुका है।

आकाशवाणी, दूरदर्शन के कारण शास्त्रीय संगीत को घर बैठे सुनना सुलभहो गया। सिनेमा में प्रयुक्त शास्त्रीय संगीत पर आधारित गीत सामान्यजनों को भी शास्त्रीय संगीत की ओर आकर्षित करने लगे हैं। इस प्रकार विभिन्न माध्यमों और संस्थानों के महत्त्वपूर्ण योगदान को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भविष्य में शास्त्रीय संगीत को उच्च स्तर तक पहुँचाने में ये संस्थाएँ और मीडिया महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। परंतु आजकल पाश्चात्य संगीत की ओर बढ़ रहे झुकाव तथा फिल्मी संगीत के गिरते स्तर को दूर करने की ओर विचार किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ :

1 . भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 9

2. वही.. पृ. 14

3. संगीत, नवंबर, 1983 'कहानी पुराने ग्रामोफोन रिकॉडों की' द्वारा विजय वर्मा, पृ. 35

4. भारतीय संगीत के वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 16.

5. संगीत, नवंबर, 1983 'कहानी पुराने ग्रामोफोन रिकॉडों को' द्वारा विजय वर्मा, पृ. 36-37

6. उत्तरी भारतीय शास्त्रीय गायन का ध्वन्यांकित अध्ययन, रमाकान्त द्विवेदी, पृ. 5.

7. भारतीय संगीत के वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 16.

8. भारतीय संगीत के वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 16.

9. भारतीय संगीत के वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 42

10. Compendium of Music materials and its utility to research in music(Thesis), Delhi, 1988. Mohd. Haroon.

11. भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 44.

12. भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 36.

13. संगीत, अगस्त, 1985, स्वागतम् सी.डी. अलविदा एल.पी., पृ. 49.

14. संगीत (मासिक पत्रिका) नवम्बर 1997, संगीत जगत, पृ. 100.

15. संगीत विषारद, बसंत, रिकॉर्डिंग, भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 45.

17. संगीत कला विहार, जुलाई, 1996, (आधुनिक तानसेन) खाँ साहब इनायत खाँ (1882-1927), द्वारा श्री सुरेश चाँदवणकर.

18. हिन्दुस्तानी संगीतः परिवर्तनशीलता, असित बैनर्जी पृ. 101.

19. भारतीय संगीत में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग, अनीता गौतम, पृ. 32-33.

20. Radio, Repair and Maintenance - H.D. Bhavani, Page 8.